।। ओ३म् ।।

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।।

वेद प्रतिपादित मानवीय मूल्यों को जन-जन तक
पहुँचाने हेतु कार्यतत्पर सशक्त एवं समर्थ प्रान्तीय आर्य संगठन
महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा का

200 वीं
सदैव सत्य
महर्षि दयानन्द सरस्वती | जयन्ती 1824-2024

वेदो की ओर लौटो !

मासिक मुखपत्र

वैदिक गर्जना

वर्ष २३ अंक १० - अक्टूबर २०२३

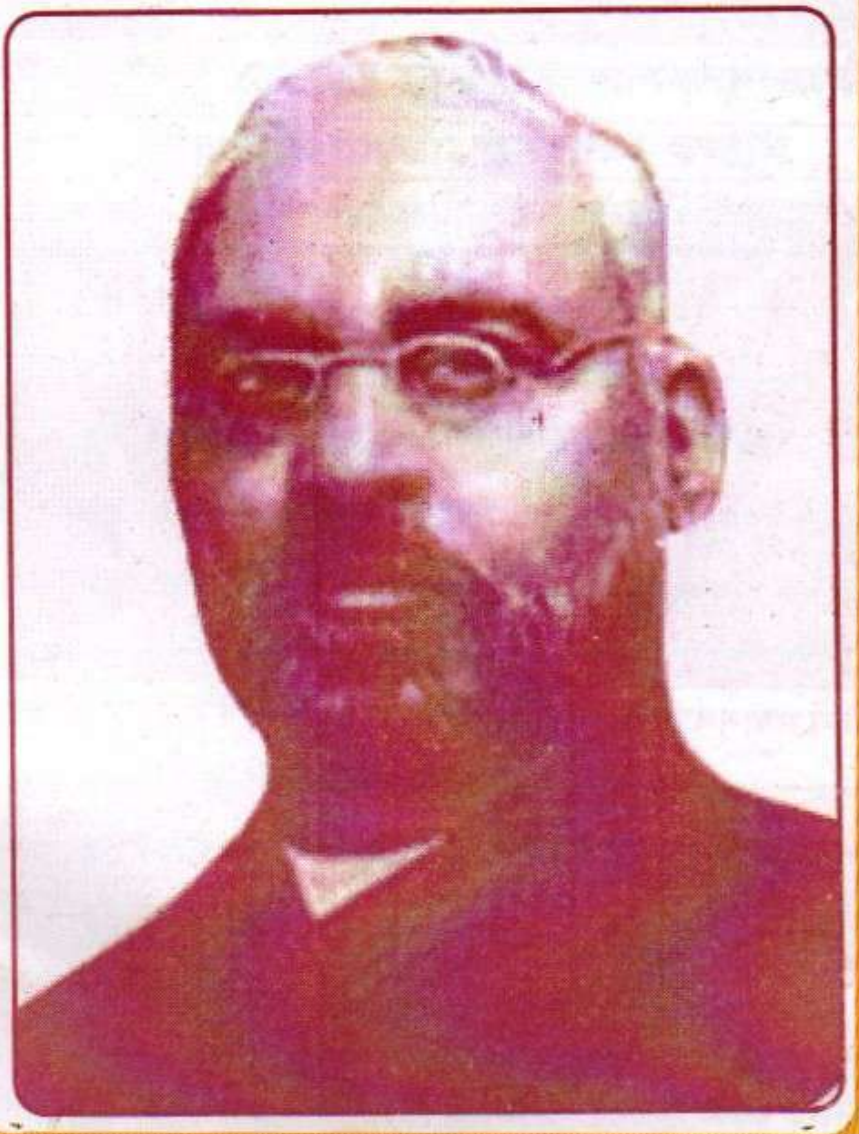

म.दयानन्द के अनन्य भक्त, क्रान्तिकारियों के आश्रयदाता

पं.श्यामजी कृष्ण वर्मा

जयन्ती दिवस(४ अक्टूबर) पर विनम्र अभिवादन!

- ऐतिहासिक कार्यक्रमों के विभिन्न चित्र -

संसद अधिवेशन में वेद व दयानंद पर विचार व्यक्त करते हुए पूर्वमंत्री डॉ.सत्यपालसिंहजी

वाराणसी में प्रधानमंत्री श्री मोदीजी का स्वागत करते हुए गुरुकुल की छात्रा कु.गार्गी माने

भगूर के एक विद्यालय में आयोजित प्रबोधन सत्र में गीत गाते हुए पं.प्रदीपजी आर्य।

महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा का
मासिक मुखपत्र

वैदिक गर्जना

सृष्टि सम्वत् १,९६,०८,५३,१२४ कलि संवत् ५१२४ विक्रम संवत् २०८०
दयानन्दाब्द १९९ भाद्रपद १० अक्टूबर २०२३

प्रधान सम्पादक
राजेन्द्र दिवे
(९८२२३६५२७२)

मार्गदर्शक सम्पादक
डॉ.ब्रह्ममुनि

सम्पादक
डॉ.नयनकुमार आचार्य
(९४२०३३०१७८)

सहसम्पादक
प्रा.ओमप्रकाश होलीकर, ज्ञानकुमार आर्य,
राजवीर शास्त्री, डॉ.अरुण चव्हाण

लेख/समाचार भेजने हेतु - ई-मेल : nayankumaracharya222@gmail.com

अनुक्रम

— हिन्दी विभाग —

१) श्रुतिसुगन्ध ०४
२) 'आरक्षण' एक त्रासदी! (सम्पादकीयम्)..... ०५
३) ब्रह्मा, विष्णु व शिव आदि के वास्तविक स्वरुप.... ०८
४) क्रान्तिवीर श्यामजी कृष्ण वर्मा १२
५) शोक समाचार १६

— मराठी विभाग —

१) उपनिषद संदेश/दयानंद वाणी १७
२) पितर श्राद्ध (महा-लय) १८
३) श्रावणात निनादले वैदिक ज्ञानाचे सूर २२
४) वार्ताविशेष २८
५) शोक वार्ता २९

प्रकाशक
मन्त्री, महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा,
सम्पर्क कार्यालय-आर्य समाज,
परली-वैजनाथ-४३१५१५

मुद्रक
वैदिक प्रिन्टर्स
महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा
आर्य समाज, परली-वै.

वैदिक गर्जना के शुल्क
वार्षिक रू.१००/-
आजीवन रू.१०००/-

इस मासिक पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा विचारों से सम्पादक मण्डल सहमत हो, यह अनिवार्य नहीं है। किसी भी विवादकी परिस्थिति में न्यायक्षेत्र परली-वैजनाथ जि.बीड ही होगा।

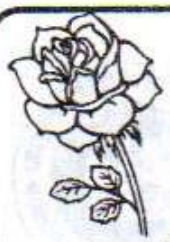

श्रुतिसुगन्ध

वैदिक समानता

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय।
युवा पिता स्वपा रुद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः।।

(ऋग्वेद ५/६०/५)

पदार्थान्वय– हे मनुष्यो! जैसे (**स्वपाः**) श्रेष्ठ कर्म का अनुष्ठान करनेवाला (**युवा**) युवावस्था युक्त और (**रुद्रः**) अन्यों का रुलानेवाला (**पिता**) पालक जन और (**एषाम्**) इनकी (**सुदुघा**) उत्तम प्रकार मनोरथ की पूर्ण करनेवाली (**सुदिना**) सुन्दर दिन, जिससे वह (**पृश्निः**) अन्तरिक्ष के सदृश्य बुद्धि (**मरुद्भ्यः**) मनुष्यों के लिये विद्यादि दान देती है, वैसे (**अज्येष्ठासः**) ज्येष्ठपन(बडप्पन)से रहित(**अकनिष्ठासः**)कनिष्ठपन से रहित (**एते**) ये (**भ्रातरः**) बन्धु जन (**सौभगाय**) श्रेष्ठ ऐश्वर्य होने के लिये (**सम्, वावृधुः**) बढते है।

भावार्थ – जो मनुष्य पूर्ण युवावस्था में विद्याओं को समाप्त कर और सुशीलता को स्वीकार कर बहुत ही उत्तम हुए उत्तम स्वभाव युक्त स्त्रियों का विवाह द्वारा स्वीकार कर के प्रयत्न करते हैं, वे ऐश्वर्य्य को प्राप्त होकर आनन्दित होते है।

।।ओ३म्।।
संशितम् इदं ब्रह्म संशितं वीर्यं बलम्।
आर्य सभ्यता व संस्कृति के प्रतीकस्वरुप
पावन विजयपर्व

विजयादशमी (दशहरा)

के उपलक्ष्य में
सभी देशवासियों को
हार्दिक मंगलमय शुभकामनायें।

सम्पादकीयम्...

आरक्षण - एक त्रासदी

जिस मनुष्यकृत जातिव्यवस्था के कारण वर्षों से समाज व देश का काफी नुक्सान हुआ और आज भी हो रहा है, उसी को आधार बनाकर विगत कई वर्षों से आरक्षण की सुविधाएं दी जा रही हैं। मनुष्य का आर्थिक स्तर भले ही ऊंचा होता हो, लेकिन सामाजिक विषमता दूर नहीं हुई है, तो क्या फायदा? इसलिए आरक्षण का प्रावधान करते समय ही देश के नेताओं ने जन्माधिष्ठित जाति का आधार न लेते हुए केवल उसके आर्थिक पिछड़ेपन को आधार बनाया होता, तो मानवसमूह से जातिप्रथा कब की नष्ट हुई होती और आर्थिक समृद्धि भी प्राप्त होती। तब आज जो समस्याएं उत्पन्न हो रही है, वे न होती।

महाराष्ट्र के दिवंगत मुख्यमंत्री श्री विलासराव देशमुखजी का एक पुराना वीडियो आजकल वायरल हो रहा है। एक विशाल समारोह में सभी दलों के नेताओं के सम्मुख वे आर्थिक आधार पर आरक्षण की बात करते हुए कहते हैं- 'जातिगत आरक्षण के कारण समाज व देश का भारी नुक्सान होता है। इसके कारण ही लोग अपनी जातियां ढूंढ कर निकालते हैं और इससे समाज में भेदभावनाओं का बखेड़ा खड़ा होता है।' श्री देशमुख जी की बात बिल्कुल सही है। आर्य समाज यही विचार कितने ही वर्षों से करते आ रहा है। पंथ या जातिप्रथा मानवता के माथे पर कलंक है। इससे समाज आपस में विभाजित होकर उसमें भेदभावनाओं की दीवारें खड़ी होती है।

जन्मगत जाति पर आधारित आरक्षण राष्ट्र की एकता व अखंडता के लिए सबसे बड़ी बाधा है । इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है मणिपुर में घट रही घटनाएं! वहां पर चल रहा आरक्षण का मुद्दा ही तो हिंसा, आगजनी व भयावह दुरवस्था का कारण बन चुका है। गत सात -आठ महीनों से वहां सामान्य लोगों का जीना मुश्किल हो चुका है । हजारों परिवार विस्थापित हो चुके हैं। वहां पर एक आदमी दूसरे का क्रूरतम शत्रु बन गया है। अब यह आग धीरे-धीरे देश के कोने कोने में पहुंच रही है। गुजरात में पाटीदार, हरियाणा में जाट, आंध्र प्रदेश में कुम्पू, राजस्थान में गुर्जर और अब महाराष्ट्र में मराठा समाज आरक्षण की दुंदुभि बजा रहा है। इस तरह भारतीय समाज आरक्षण के कारण आपस में टकराता व बंटता रहेगा, तो देश का क्या होगा ? इस पर कोई भी विचार करने के लिए तैयार नहीं है। राजनेता आरक्षण का गाजर दिखाते है और सत्तास्वार्थ का मजा लूटते हैं।

यदि पहले से ही आरक्षण की नीतियां आर्थिक आधार पर होती, तो आज ये मुसीबतें खड़ी ना होती, जो कि देश के लिए त्रासदी सी बन गई है। देश की स्वतंत्रता के बाद जब पिछड़ी जातियों को आरक्षण देने की बात चल पड़ी, तो उस समय जन्मगत आधार के बजाय आर्थिक आधार लिया होता, तो यह संघर्ष ही खड़ा न होता।

रही बात रही बात आरक्षण के मर्यादा की। जो वर्ग आरक्षण के माध्यम से लाभान्वित होकर समृद्ध हो चुका है, उसका आरक्षण अब बंद होना चाहिए। वस्तुत: यह बात आज की व्यवस्था को अटपटी लगती है, लेकिन है तो सभी के हित की ही ! स्वतंत्रता के बाद आरंभ में दस वर्ष तक ही आरक्षण का प्रावधान था। लेकिन उसमें धीरे-धीरे १०-१० वर्षों की बढ़ोतरी की गई। अब इसे रोकने के लिए कोई तैयार नहीं है । क्योंकि इस जातिगत आरक्षण के पीछे जहां लोगों की स्वार्थवृत्ति छिपी है, वहीं राजनीतिक दलों की स्वार्थनीति भी! जो इसके विरोध में बात करेगा, उसे जातिसमूह के वोट नहीं मिलेंगे ? तब तो आरक्षण का यह खेल कभी समाप्त ही नहीं होगा!

देश के संविधाननिर्माता डॉ.बाबासाहब अम्बेडकरजी ने भी आरक्षण लागू करते समय कहा था -'हर दस वर्ष में आरक्षण की समीक्षा होनी चाहिए। जिनको आरक्षण दिया जा रहा है, क्या उनकी स्थिति में सुधार हुआ या नहीं?' उन्होंने यह भी कहा था कि 'यदि आरक्षण देने से किसी वर्ग का विकास हो रहा हो, तो उसके आगे की पीढ़ी को इसका लाभ नहीं होना चाहिए! अत: उसका आरक्षण बंद हो जाय, क्योंकि आरक्षण का मतलब बैसाखी नहीं है, जिसके सहारे आजीवन जिंदगी जिया जाए। यह तो बस एक आधार है विकसित होने का!'

डॉ.अम्बेडकर जी के इन उच्च विचारों को क्या ये आरक्षण के उपभोक्ता लोग, बुद्धिजीवी वर्ग या सभी राजनेता स्वीकारने के लिए तैयार हैं? आज तो एक व्यक्ति आरक्षण के आधार पर खासी नौकरी प्राप्त करता है। पूरे परिवार की आर्थिक स्थिति मजबूत बनाता है। अपने बच्चों को शिक्षा व नौकरी दिलाने में वह अब पूरी तरह से समर्थ बन जाता है, तब उसे स्वेच्छा से ही अपना आरक्षण बंद करना चाहिए। इतना ही नहीं इससे भी आगे बढ़कर अपनी जन्मगत जाति भी समाप्त करनी चाहिए। क्या शासनव्यवस्था इस प्रकार के नियम व कानून बना सकती है? अथवा समाज में जो भी आर्थिक दृष्टि से गिरे हुए बच्चे हैं, उन्हें शिक्षासुविधाएं दिलाने या फिर उन्हें सहायता करने हेतु कोई आगे हाथ बढायेगा? आज तो मनुष्य की यह दुष्प्रवृत्ति ही बन

चुकी है कि एक बार जब वह गरीबी से उठकर धनवान बन जाता है, तो वह अपने पुराने दुर्दिनों को भूल जाता है। अपने से निचले लोगों से वह संपर्क या व्यवहार भी करना नहीं चाहता। तो फिर आरक्षण से लाभान्वित होने का मतलब ही क्या?

एक ओर हम जातिप्रथा के निर्मूलन की बातें करते हैं, तो दूसरी ओर इसी को जाति का ही सहारा लेकर आरक्षण का लाभ उठाना चाहते हैं, इससे तो फिर जातियां और बढ़ती ही जाएगी। आजकल हमारे राजनेता जातिगत आधार पर ही देश की जनगणना करने की बात कर रहे हैं। इससे क्या होगा? समग्र देश में ओपन,ओबीसी ईबीसी, एस्सी, एनटी. आदि जातियों में देश विभक्त होगा। फिर देश की एकता और अखंडता कैसे सुरक्षित रह पाएगी? अब तो संघ, भाजपा सहित सभी सत्तापक्ष व विपक्ष के सभी नेता लोग आरक्षण के ही पक्ष में बातें कर रहे हैं। रा.स्व.संघ के सरसंघचालक श्री मोहन भागवतजी ने भी हाल ही में आरक्षण के समर्थन में कहा– 'जब तक समाज में भेदभाव विद्यमान है, तब तक आरक्षण रहेगा ही!' इन भेद भावनाओं को क्या वे मिटाना चाहते हैं? तो फिर इसके मूल की भूल को समझना व सुधारना होगा। जिस जन्मगत वर्णव्यवस्था ने वर्षों पूर्व से ऊंच–नीच की दीवारें खड़ी की है, क्या उसे तोड़ने के लिए भागवत जी व संघपरिवार तैयार है? क्या उन दलित, आदिवासी, पिछड़े समाज को वेदविद्या, धार्मिक कर्मकांड आदि का अधिकार देने हेतु आगे आ सकेंगे? इसके लिए पहले हमें अंतर्मन में छिपी हुई छुआछूत की दुर्भावना को दूर करना होगा। सालों से अपने ही अछूत भाई जो विद्या,ज्ञान, धर्म कर्म एवं अधिकारों से वंचित है, उन सभी को अपनाना होगा। आर्थिक आरक्षण से उनके पास धन तो आ गया ,लेकिन सामाजिक समता अभी नहीं आयी। उनके साथ बंधुत्व की भावनाएं कब स्थापित होंगी? आज भी बहुत सारे जगह पर मंदिरों में दलितों को प्रवेश नहीं है! उन्हें अपना समझकर रोटी– बेटी व्यवहार करने में कोई तैयार है ? जब हमारे अंतरंग में ये दुर्भावनाएं रहेगी, तो भेदभाव भी समाप्त ही नहीं होगा और आरक्षण भी कभी समाप्त नहीं होगा। इसलिए भागवत जी समेत सभी राजनेताओं, सभी धर्मगुरुओं या सुधारवादियों को निष्पक्ष भाव से विचार करना होगा और महर्षि दयानंद के मन्तव्यों के अनुसार भेदभावविरहित आर्य राष्ट्र व आदर्श समाज की स्थापना करने हेतु कदम उठाने होंगे। क्योंकि वेद ने यही कहा है –

अजेष्ठासो अकनिष्ठास एते
सं भ्रातरो वावृधो सौभगाय।

- नयनकुमार आचार्य

ब्रह्मा, विष्णु व शिवादि के वास्तविक स्वरुप

– महेन्द्र प्रताप यादव

ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा गणेश ये सब परमपिता परमात्मा के गौणिक नाम हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने कायाकल्प करनेवाले अपने अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' के प्रथम समुल्लास में यह सिद्ध किया है। इसके अतिरिक्त ब्रह्मा, विष्णु तथा महादेव (शिव) नाम के ऐतिहासिक महापुरुष भी हुए थे। 'कालान्तर में इन लोगों के स्मरणार्थ राजासनों के नाम पड गये। जो उन पर बैठता, वही ब्रह्मा, विष्णु तथा महादेव हो जाता था।' ये राजासन महाभारत काल तक चलते रहे। कालान्तर में समाप्त हो गये। इसी प्रकार इन्द्र, कुबेर तथा जनकादि राजासन तथा वसिष्ठ, विश्वामित्र, नारद इत्यादि देवर्षि-आसन भी थे। जैसे पुराणियों में शंकराचार्य, गोरखनाथ तथा कीनाराम इत्यादि के आसन (पीठ) चल रहे हैं। प्रथम इन्द्र त्वष्टा के पुत्र थे। इसी प्रकार कुबेर विश्रवा के तथा जनक निमि के पुत्र थे। इतिहास के अतिरिक्त विष्णु, शिव तथा गणेश रुपक तथा प्रतीक भी हैं। नवीन पुराणकारों ने प्रतीक रुपक तथा इतिहास के रुप में वर्णन कर अनर्थ कर डाला। आइये इन पर पृथक्-पृथक् स्वल्प बुद्धि से विचार करें।

* **ब्रह्मा** – ये आदि सृष्टि में उत्पन्न हुए थे। इनकी पत्नी का नाम सरस्वती था। ब्रह्मा के उपरान्त अन्य ब्रह्मा पुष्कर के राजा थे। ब्रह्मा तथा सरस्वती चारों वेदों के ज्ञाता की उपाधि थी। ये चारों वेद उनके ४ मुंह के समान थे। ब्रह्मा नाम के राजा भी होते रहे तथा प्रजा में भी चारों वेदों के ज्ञाता को ब्रह्मा कहा जाता था। आदि ब्रह्मा विराट् के पिता थे। ब्रह्मा का रुपक नहीं मिलता है।

* **विष्णु** – विष्णु के पिता का नाम विराट् तथा पत्नी का नाम लक्ष्मी था। ये तिब्बत के वैकुण्ठ के राजा थे। इतिहास के अतिरिक्त विष्णु राष्ट्र का प्रतीक है। आर्ष ग्रन्थ में **'राष्ट्रं वै विष्णुः'** कहा गया है। विष्णु के ४ हाथ है, जिनमें क्रमशः शंख, चक्र, गदा तथा पद्म हैं। विष्णु कमल पर खडा रहता है। शिर के ऊपर सर्प रहते हैं तथा सर्पों पर सोता है और लक्ष्मी उसका पैर दबाती है। यह क्षीरसागर में सोता है। शंख घोषणा वा विजय, चक्र प्रगति का, गदा आयुध का, पद्म (कमल) धन का प्रतीक है।

सर्प कडी सुरक्षा का, लक्ष्मी धन का, दबाना पुष्टि का, पैर आधारशिला का तथा क्षीर सागर आस-पास के देश का प्रतीक है। इन प्रतीकों को इतिहास के विष्णु से पृथक् रखना चाहिए। ऐतिहासिक विष्णु के पास गरुड(गरुड सदृश) विमान था। कहीं आने जाने के लिए गरुड का प्रयोग करते थे।

* **शिव** :- शिव अग्निष्वात्ता के पुत्र थे। इनकी पत्नी का नाम दुर्गा तथा पार्वती था। दुर्गा वा पार्वती के विमान का नाम व्याघ्र या सिंह यान था। प्रथम शिव भूटान के राजा थे, इसलिए इन्हें भूतनाथ कहा जाता है। इन्होंने सुनीति, धर्म, सच्चाई तथा सच्चरित्रता इन गुणों से युक्त होकर ३६ वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करने के कारण रुद्र की उपाधि प्राप्त की थी। प्रथम शिव की राजधानी कैलास थी। अन्य शिव काशी तथा कन्नौज के भी राजा थे। शिव अत्यन्त ज्ञानी थे, जिससे उनकी ज्ञानाक्षि खुल गयी थी। मनुष्य में ज्ञानाक्षि को ही तीसरी आंख कहते हैं। जब ज्ञानाक्षि खुलती है, तो काम भस्म हो जाता है। काम का कोई देवता नहीं होता, वरना कामवासना को ही काम कहा गया है। शंकर जी ने अपनी कामवासना को जीत लिया था। शिर से जलधारा का तात्पर्य ज्ञान की धारा से है अर्थात् वे हर समय ज्ञान रस प्रवाहित करते रहते थे। विभूति धारण का तात्पर्य शंकर जी बडे ऐश्वर्य वाले थे तथा योगाभ्यास से अनेक विभूतियों को प्राप्त किए थे। शिर पर चन्द्रमा का तात्पर्य वे बडे शान्त स्वभाव के थे। सर्प धारण का तात्पर्य वे विपत्ति सहनेवाले थे। ये दानी, तपस्वी तथा अप्रतिम शक्तिशाली थे। इनके पास पाशुपतास्त्र तथा शूलायुध या शूलास्त्र थे। इनके पुत्र गणेश तथा कार्तिकेय थे। गणेश मनुष्य थे, उनका मुख हाथी के समान नहीं था। कार्तिकेय छहों शास्त्रों(दर्शनों) के ज्ञाता थे। ये ही शास्त्र उनके ६ मुंह थे। शिव मनुष्य थे। सर्प, चन्द्रमा, गंगा(जलधारा) तथा विभूति चित्र में दिखाने की कोई आवश्यकता नहीं है। उनके शरीर पर ये चीजें नहीं थीं। उनमें आन्तरिक गुण थे। तीसरी आंख का होना भी गुण था न कि शंकर जी के पास तीन आँखे थे। उनके पास भी हमी लोगों के समान दो आँखे ऊपर से थी। भीतर ज्ञान की तीसरी आँख खुल गयी थी। पौराणिकों ने तो शिव जी को जो कि ऐतिहासिक महापुरुष हुए थे, उन्हें डमरु, त्रिशूल, सर्प, चन्द्रमा, गंगा, विभूति तथा तीसरी आँख प्रदर्शित कर मदारी वा बरुआ बना दिये है। ऐसे

चित्र देखकर प्रबुद्ध वर्ग में शंका उत्पन्न हो जाती है कि ऐसा विचित्र व्यक्ति भी कभी हुआ था वा नहीं? ऐसे रेखांकनों से अबुद्ध वर्ग में पाखण्ड तथा प्रबुद्ध वर्ग में घृणा भी उत्पन्न हो सकती है। यहां तक ऐतिहासिक राजा शिव के विषय में लिखा गया है। अब शिव के रुपक को लिखा जा रहा है। इतिहास तथा रुपक को पृथक् रखना चाहिए।

शिव परमात्मा को कहते हैं। शिव सबका आदि कारण है। उसका वंश कोई नहीं है। वह अपने आप अकेला है। इसी से वह दिगम्बर कहलाता है। सत्, रज तथा तम ही त्रिशूल तथा सोना, चांदी तथा लोहे के त्रिपुर हैं। जिनमें बने जीवात्मा, स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण शरीरों में रहता है। मोक्षावस्था में परमात्मा [illegible] जिसके [illegible] वृ[illegible] है। [illegible] को प्राप्त करता है। नाना कर्म ही उसकी जटाएँ हैं। वेदत्रयी ही उसके नेत्र(ईक्षण शक्ति) हैं। यह शिव का रुपक हुआ। रुपक तथा इतिहास पृथक्-पृथक् होते हैं।

* गणेश – ये शिव जी के पुत्र थे। इनका सम्पूर्ण आकार मनुष्यवत् था, अर्थात् ये मनुष्य थे। इतिहास के अतिरिक्त गणेश (गण=गणराज्य, ईश-स्वामी) राष्ट्राध्यक्ष का प्रतीक है। गणेश (राष्ट्राध्यक्ष तथा सम्राट) के वर्णन में निम्नलिखित बातें वर्णित की जाती हैं –

तीखी आंखें, बडे-बडे कान, लम्बी नाक, भारी पेट तथा निचले भाग में मूषक निम्न के प्रतीक हैं-

राष्ट्राध्यक्ष को चाहिए कि शत्रुओं पर तीखी आँखे रखें अर्थात् प्रत्येक कार्य को सावधानी से देखें। लम्बे कान अर्थात् शत्रुओं की बात सुनते रहें। लम्बी नाक अर्थात् हानिकारक पदार्थ को दूर फेंक कर दूर का लाभ कर पदार्थ ग्रहण करना, भारी पेट अर्थात् सभी प्रकार की बातें जानकर पचा लेना तथा अपने नीचे मूषक: अर्थात् गुप्तजन [illegible], जो कि शत्रुओं की रहस्यमय [illegible] (चोरी) करके ले आएँ। [illegible] गणेश के वर्णन के अनुरुप [illegible] चाहिए। गणेश पूजन का तात्पर्य राष्ट्राध्यक्ष (सम्राट्) की आज्ञा के अनुरुप चलना है, देशभक्ति करना है। सभी जनों को विशेषकर आर्यजनों को चाहिए कि वे इतिहास, रुपक तथा प्रतीक को पृथक्-पृथक् रखकर सत्यासत्य से जनता को अवगत करावें।

*** ब्रह्मा, विष्णु, शिव के विषय में महर्षि का चिन्तन –**

विष्णु वैकुण्ठ में रहने वाले थे और वहीं उनकी राजधानी का नगर था। महादेव कैलाश के रहने वाले थे। कुबेर अलकापुरी के रहने वाले थे। यह सब इतिहास केदारखण्ड में वर्णन किया गया है। हम स्वयं भी इन सब ओर घूमे हुए हैं।

इस समय भी भरतखण्ड में हमारे कथन का प्रमाण मिलता है। देहली में इन्द्रप्रस्थ नामी स्थान था, वहां इन्द्र का राज्य था। पुष्कर और ब्रह्मावर्त में ब्रह्मा ने राज्य किया। काशी, उज्जैन और हरिद्वार आदि में महादेव जी का राज्य था।

('उपदेशमंजरी' के दशम उपदेश से)

– पहाडपुर(आर्यनगर), हेतमपुर, वाराणसी

म.दयानन्द सरस्वती २०० वीं जयंती उत्सव

भारत सरकारद्वारा उच्चस्तरीय समिति गठित

- महाराष्ट्र सभा के प्रधान श्री योगमुनिजी सदस्य बनें -

केंद्र सरकार की ओर से इस वर्ष मनाये जा रहे 'महर्षि दयानन्द द्विजन्मशताब्दी समारोह' हेतु उच्चस्तरीय समिति का गठन हुआ है। प्रधानमन्त्री श्री नरेंद्र मोदीजी की अध्यक्षता में स्थापित इस केन्द्रीय उंच स्तरीय समिति में देश की विभिन्न प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं, गुरुकुलों तथा अन्य संस्थाओं से एक-एक सदस्य एवं प्रतिष्ठित आर्य कार्यकर्ताओं को भी सदस्य के रूप में इसमें शामिल किया है। इस समिति में महाराष्ट्र आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री योगमुनिजी को भी सदस्य बनाया गया है।

दि.१७ अगस्त २०२३ को केन्द्र शासन के अन्तर्गत संस्कृति मंत्रालय द्वारा उपरोक्त राजपत्र (गॅझेट) प्रसिद्ध किया गया है। इसमें लगभग ९७ सदस्य सम्मिलित हैं। वरिष्ठ सदस्य के रूप में देश के गृहमंत्री श्री अमितजी शाह, महिला व बालकल्याण मन्त्री श्रीमती स्मृति इराणी, संस्कृति मन्त्री श्री जी.किशन रेड्डी, विपक्षदल के नेता श्री मल्लिकार्जुनजी खडगे, गुजरात के राज्यपाल डॉ.देवव्रतजी आचार्य, योगगुरु बाबा रामदेवजी, पूर्वमन्त्री डॉ.सत्यपालसिंहजी, सांसद स्वामी सुमेधानंदजी, विनय आर्यजी आदियों का समावेश है। इन सभी सदस्यों का हार्दिक अभिनंदन..! श्री योगमुनिजी के नेतृत्व में महाराष्ट्र में म.दयानन्द द्विजन्मशताब्दी समारोह का भव्य आयोजन करने तथा उससे जुडी अन्य गतिविधियों को बढाने में पूर्ण सहायता मिलेगी।

जयन्ती दिवस पर विशेष –

क्रान्तिवीर : श्याम जी कृष्ण वर्मा

– (स्मृतिशेष)आचार्य भगवानदेव 'चैतन्य'

क्रान्तिवीर श्याम जी कृष्ण वर्मा ने एक बार कहा था कि क्रान्तिकारी, देशसेवी किसी भवन के कलश, उसके शिखरों पर नजर आनेवाले, सजाकर संजोए गए पत्थर नहीं, ये तो आजादी के भवन की वे आधारशिलाएं हैं, जिन्हें सामान्यतः जानते हुए भी कोई देख नहीं पाता। उनकी बात अक्षरशः सत्य है, क्योंकि यदि क्रान्तिकारियों ने अपने जीवनों को उत्सर्ग न किया होता, तो आज हम कदापि स्वतन्त्र भारत में सांस नहीं ले रहे होते। ये क्रान्तिकारी ही देश की नींव के पत्थर हैं। स्वयं श्याम जी कृष्ण वर्मा एक ऐसे महानायक थे, जिनका नाम भले ही आज आम जनता न जानती हो मगर उनके प्रयासों से ही वास्तव में हमें आजादी मिल पाई है, क्योंकि वे लगभग समस्त क्रान्तिकारियों के आदि गुरु थे। संयोग देखिए कि इस वीर का जन्म 'क्रान्तिवर्ष' सन् १८५७ में ही हुआ, जिसे भारतीय स्वतन्त्रता का प्रथम संग्राम कहा जाता है। इनका जन्म ४ अक्तूबर, १८५७ को करसन जी भंसाली के यहाँ हुआ। इनके पिता गुजरात राज्य के कच्छ प्रदेश में माण्डवी नगर के निकट विलायल गांव के निवासी थे।

श्याम जी कृष्ण वर्मा बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि तथा अत्यधिक मेधावी थे, मगर निर्धन परिवार से सम्बन्ध होने के कारण इन्होंने धनाढ्य लोगों के यहाँ काम करके अपना जीवन-निर्वाह किया। ऐसे ही लोगों ने उन्हें अध्ययन के लिए सहयोग दिया और अपने परिश्रम के कारण वे अध्ययनरत रहे। सन् १८७४ में महर्षि दयानन्द जी मुम्बई में आचार्य कमलनयन जी से शास्त्रार्थ कर रहे थे, उसी समय श्याम जी का उनसे सम्पर्क हुआ। महर्षि जी ने उनमें छिपी प्रतिभा को पहचाना और उन्हें संस्कृत तथा प्राचीन साहित्य का गहन अध्ययन करने के लिए प्रेरित किया। प्रतिभा के धनी श्यामजी ने महर्षि के आग्रह पर संस्कृत का अध्ययन आरम्भ किया और जल्दी ही वे अंग्रेजी के साथ-साथ संस्कृत के भी प्रकाण्ड पण्डित बन गए। भाषण शैली और लेखनी की दृष्टि से भी कोई उनका सानी नहीं था।

उन्हीं दिनों आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में संस्कृत के प्राध्यापक श्री मोनियर विलियम अपने

विश्वविद्यालय के लिए एक ऐसे संस्कृत के पण्डित खोज में मुम्बई आए, जिसे संस्कृत के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा पर भी समान अधिकार हो। विलियम के आग्रह पर महर्षि दयानन्द जी ने वर्मा जी को इंग्लैण्ड भेजा और वहां जाते ही आक्सफोर्ड में उनकी विद्वत्ता का डंका बजने लगा। उन्होंने अध्यापन के साथ-साथ अपना अध्ययन भी जारी रखा और एम.ए. करने के साथ-साथ वे बैरिस्टर भी बन गए। उन्होनें अपनी अद्भूत तार्किक बुद्धि से विदेशी विद्वानों की अनेक शंकाओं का निवारण किया। उन्होंने वैदिक एवम् आर्य सभ्यता की प्राचीनता और श्रेष्ठता से सभी को परिचित किया। सन् १८८१ में जर्मनी की राजधानी बर्लिन में प्राच्य विद्याओं का एक अन्तर्राष्ट्रीय महासम्मेलन हुआ, जिसमें श्याम जी ने भी भाग लिया। उनके शोधपत्र का विषय था-'संस्कृत एक जीवन्त भाषा है।' इस शोध पत्र से उनकी धाक जम गई। इस बीच उनका विवाह १८७५ में एक धनी सेठ छब्बीलदास लल्लू भाई की सुपुत्र भानुमती से हो गया। परमात्मा की कृपा से उन्हें सहधर्मिणी भी उनके विचारों के अनुकूल ही मिली तथा उन्होंने वर्मा जी के प्रत्येक कार्य में सक्रिय सहयोग दिया।

आप सन् १८८५ तक इंग्लैण्ड में रहे और इस दौरान निरन्तर उनका पत्र-व्यवहार महर्षि दयानन्द जी के साथ होता रहा और यह पत्र-व्यवहार संस्कृत में ही होता था। जब वे १८८५ में पुनः भारत लौटे, तो उनका सर्वत्र स्वागत हुआ। अब योग्यता के आधार पर रजवाडों ने उन्हें अपने यहाँ उच्च पद देने की पेशकश की, तो उन्होंने उदयपुर, रतलाम आदि राज्यों में कार्य किया। मगर महर्षि दयानन्द जैसे क्रान्तिकारी के इस शिष्य को अंग्रेजों के गुणगान गाने वाले उन रजवाडों के यहाँ नौकरी करना रास नहीं आया और उन्होंने अन्ततः उससे मुक्ति पा ली। सन् १८८७ में जब प्लेग फैला तथा ब्रिटिश राज्य सत्ता ने लोकमान्य तिलक पर अभियोग चलाया, तो इसका वर्मा जी के मानस पर गहरा प्रभाव पडा। अतः उसी वर्ष वे पुनः इंग्लैण्ड चले गए। उन्हें यह पक्का विश्वास था कि गुलाम मानस से परिपूर्ण रजवाडों के यहाँ रहने से नहीं, बल्कि भारत से बाहर रहकर क्रान्तिकारी गतिविधियों को समग्रता के साथ चलाया जा सकता है। विदेश जाते ही उन्होंने वहां के बुद्धिजीवियों की बैठक बुलाई और 'इण्डियन होमरुल सोसाइटी' स्थापित की, जिसका उद्देश्य भारत को

स्वतन्त्रता दिलाना था। इसी उद्देश्य से उन्होंने 'सोशियालोजिस्ट' नामक पत्रिका का प्रकाशन भी प्रारम्भ किया। यही नहीं उन्होंने १८०५ में २५ कमरों का एक मकान खरीद कर ऐतिहासिक 'इण्डिया हाउस' की स्थापना की। उन्होंने घोषणा की कि जो छात्र अंग्रेजों की नौकरी न करने की तथा तन, मन, धन से देशसेवा का व्रत लेंगे, ऐसे युवकों को प्रतिवर्ष दो हजार रुपये छात्रवृत्ति के रुप में दिए जायेंगें। इण्डिया हाऊस की स्थापना वर्मा जी का ऐसा ऐतिहासिक कार्य था, जिससे निश्चित रुप से स्वतन्त्रता संग्राम को एक सही दिशा मिली। डॉ.हरदयाल, मैडम कामा, विपिनचन्द्र पाल, मदनलाल ढींगरा तथा वीर सावरकर आदि ने 'इण्डिया हाउस' जाकर तथा वर्मा जी के सानिध्य में ही क्रान्तिकारी गतिविधियों को सक्रियता प्रदान की। इण्डिया हाउस प्रत्येक क्रान्तिकारी के लिए शरणस्थली और वर्मा जी को प्रेरणास्रोत बन गए। यह स्थान क्रान्तिकारियों के लिए किसी मन्दिर की तरह पावन बन गया। कहते हैं कि यहीं पर लेनिन, म.गोर्की, अलडर्ड, महात्मा गाँधी तथा भाई परमानन्द आदि अनेक नेता भी वर्मा जी से विचार-विमर्श करने के लिए आए। महात्मा गाँधी वर्मा जी को प्रभावित नहीं कर पाए, क्योंकि वर्मा जी का मानना था कि केवल भीख मांगकर स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती है। **उनका मानना था कि काँग्रेस की स्थापना अंग्रेजों ने इसलिए की ताकि तुष्टिकरण की नीति चलती रहे और १८५७ जैसी क्रान्तिकारी घटना न घट सके।** उन दिनों कांग्रेस में भी दो गुट थे- गरम दल और नरम दल। वर्मा जी गरम दल के हिमायती थे, क्योंकि महर्षि दयानन्द जी के सम्पर्क में रहकर उन्हें स्वराज्य प्राप्ति की प्रेरणा मिली थी। 'स्वराज मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है', तिलक के इस उद्घोष को पूर्णता देने के लिए ही, उनके सम्पर्क में आए। वे प्रत्येक क्रान्तिकारी को प्रेरित करते थे। सावरकर जी ने उनके बारे में बताया था कि पण्डित जी हर दृष्टि से उन्नत पक्ष के पक्षधर थे एवं प्रगतिशील थे। धार्मिक पक्ष हो या समाज-सुधार, हिन्दू समाज को जाति-पाँति की कुरीतियों से मुक्त कराना या हिन्दुस्तान के इतिहास का पुनर्लेखन या शिक्षा और स्वाधीनता का पक्ष और आर्थिक विषमताओं का समाधान-वर्मा जी क्रान्तिकारी चेष्टाओं के द्वारा ही समाधान पक्षधर थे।

श्यामजी की इन समस्त गतिविधियों की भनक ब्रिटिश सरकार को भी मिली और सन् १८०७ में वहां

की पार्लियामेण्ट में उनके विरुद्ध कार्रवाई करने की मांग भी उठी।

अब अंग्रेज गुप्तचरों की इन पर कडी नजर रहने लगी। सुरक्षा की दृष्टि से वे इंग्लैण्ड छोडकर पेरिस चले गए। उनके जाने के बाद 'इण्डिया हाउस' का समस्त कार्यभार सावरकर जी ने संभाल लिया। पेरिस में उनकी मुलाकात श्रीमती रुस्तम जी भीका कामा से पुनः हुई, जो वर्मा जी के एक मात्र भाषण की प्रेरणा से ही क्रान्तिकारी बन गई थीं। वे अपने उपचार के लिए वहां गई हुई थी, अतः हमारे नायक वहां भी मैडम कामा और राव राणा जी के साथ मिलकर पुनः क्रान्तिकारी गतिविधियों में लग गए। मैडम कामा वहां 'वन्दे मातरम्' और 'तलवार' नामक दो पत्र निकालती थीं। वर्मा जी सन् १८१४ तक पेरिस में रहे, मगर प्रथम विश्वयुद्ध छिड जाने के कारण इंग्लैण्ड की सरकार का दबाव पडने के कारण उन्हें फ्रांस ने अपने यहाँ रहने देना उचित नहीं समझा और वे स्विट्जरलैण्ड होते हुए जैनेवा चले गए। जब वे स्विट्जरलैण्ड में थे, तो जवाहरलाल नेहरु जी ने इनसे भेंट की थी तथा इन्हें 'बूढे शेर' की संज्ञा दी थी। वे अपने जीवन के अन्तिम क्षणों तक भारत मां की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करते रहे।

श्याम जी कृष्ण वर्मा एक ऐसे नरपुंगव थे, जिनके हृदय में देशप्रेम कूट-कूट कर भरा हुआ था। वे इण्डिया हाउस के संस्थापक,इण्डियन होमरुल सोसाइटी के जनक,इण्डियन सोशियोलौजिस्ट पत्रिका के प्रणेता ही नहीं, बल्कि महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के ऐसे अनन्य शिष्य थे, जिन्होंने ब्रिटेन में रहकर अपने पुरुषार्थ और प्रतिभा के बल पर ब्रिटिश साम्राज्य को समाप्त करने की सेन्ध लगाकर उसे ध्वस्त करने की सर्वप्रथम नींव रखी।

उन्होंने देश की स्वतन्त्रता के लिए ऐसे क्रान्तिकारियों को तैयार किया, जिन्होंने अपने प्राणों की बाजी लगाकर अंग्रेजों को भाग जाने के लिए मजबूर किया। भले ही वे अपनी आँखों से भारत मां को स्वतन्त्र नहीं देख सके, क्योंकि इस महान् क्रान्तिकारी और नररत्न का ३१ मई, १९३० को निधन हो गया। अन्तिम समय में इनकी सहधर्मिणी भानुमति जी इनके पास थी, जिन्होंने प्रत्येक कठिनाई में इनका साथ दिया था। इनके कोई सन्तान नहीं थी।

भले ही श्याम जी कृष्ण वर्मा सशरीर आज हमारे बीच नहीं हैं, मगर उनकी यशोगाथा आनेवाली पीढियों के हृदयों में देशप्रेम की ज्वाला को सदा सर्वदा प्रज्वलित रखेगी। क्रान्तिकारियों के आदि प्रणेता इस महामानव को शतशः नमन...!

* * *

शोक समाचार

श्रीमती पार्वतीबेन वेलानी का देहावसान

आर्य समाज वारजे पुणे की ज्येष्ठ कार्यकर्त्री श्रीमती पार्वतीबेनजी कल्याणजी वेलानी का दि.२३ सितम्बर २०२३ को पुणे में हृदयाघात से दुःखद निधन हो गया। वे ७३ वर्ष की थी। वे अपने पश्चात् एक पुत्र, तीन पुत्रियां, दामाद, पुत्रवधू, तथा पौत्र-पौत्रियों से भरा परिवार छोडकर संसार से विदा हो गयी। श्रीमती पार्वतीबेन आर्य प्र.सभा गुजरात तथा आर्यवन रोजड ट्रस्ट के दिवंगत प्रधान श्री कल्याणजी वेलानी की धर्मपत्नी थी। वैदिक विचारधारा पर उनकी पूरी निष्ठा थी। आर्य समाज वारजे-पुणे की सक्रिय सदस्या होने के साथ ही आतिथ्यसेवा, परिवार का निर्माण, पुण्यदान आदि कार्यों में वे सदैव आगे रहती थी। उनके पार्थिव शरीर पर पुणे के वैकुण्ठ धाम में वैदिक रीति से अन्तिम संस्कार किये गये।

प्रचेता वर्मा नहीं रहे।

अहमदनगर के आर्य कार्यकर्त्ता एवं स्थानीय स्वामी विरजानन्द दण्डी कन्या गुरुकुल के संस्थापक संचालक श्री प्रचेता रामचन्द्रजी वर्मा का दि.७ अक्टूबर २०२३ को एक वाहन दुर्घटना में आकस्मिक दुःखद निधन हुआ। उनकी आयु ६५ वर्ष की थी।

उनके पश्चात् परिवार में पत्नी, तीन कन्याएं व एक पुत्र विद्यमान हैं। श्री वर्माजी ने अपनी कन्याओं का गुरुकुल भेजकर वेद व संस्कृत की विदुषी बनाया। इन्हीं कन्याओं के निर्देशन में गत ३ वर्ष पूर्व कन्या गुरुकुल का शुभारम्भ किया। यह गुरुकुल नगर-पुणे मार्ग पर कामरगांव के निकट पिंपलगांव कौडा इस स्थान पर चल रहा है। श्री प्रचेताजी के अकस्मात चले जाने से नगर व पुणे परिसर की तथा कन्या गुरुकुल की काफी क्षति हुई है।

श्री प्रचेता जी के पार्थिवपर शोकपूर्ण वातावरण में वैदिक पद्धति से अन्तिम संस्कार किये गये।

उपरोक्त दोनों दिवंगत आत्माओं की शान्ति व सद्गति हेतु ईश्वर से प्रार्थना!
महाराष्ट्र आर्य प्र. सभा एवं सभी आर्य समाजों की ओर से भावभीनी श्रद्धांजलियां..!

।।ओ३म्।।

माझा मराठीची बोलु कवतिके। परि अमृतातेही पैजेसीं जींके।
ऐसी अक्षरेंचि रसिकें। मेळवीन।। (संत ज्ञानेश्वर)

* मराठी विभाग *

* उपनिषद संदेश *

ज्ञानी व अज्ञानी लोक !

पराचः कामाननुयन्ति बालास्ते मृत्योर्यन्ति विततस्य पाशम्।
अथ धीरा अमृतत्वं विदित्वा ध्रुवमध्रुवेष्विह न प्रार्थयन्ते।।

(कठोपनिषद्-४/२)

अर्थ – जे लोक बाह्य विषयांची इच्छा करीत त्यांच्या पाठीमागे धावतात, ते अज्ञानी पुरुष आहेत. असे ते मोठ्या प्रमाणातील प्राण्यांमध्ये पसरलेल्या मृत्यु(दुःख) रुपी जन्म-मरणाच्या बंधनामध्ये अडकतात. पण जे विवेकशील ज्ञानी पुरुष आहेत, ते नेहमी दुःखरहित मोक्ष सुखाला ओळखून या जगाच्या अनित्य पदार्थांच्या नश्वर सुखाची कधीही इच्छा धरत नाहीत.

* दयानंद वाणी *

श्रीकृष्ण एक थोर महापुरुष!

श्रीकृष्णाचा जो इतिहास महाभारतात दिलेला आहे, तो अत्यंत उत्तम आहे. त्यांचे गुण, कर्म, स्वभाव व चारित्र्य हे महापुरुषाला शोभावेत असे आहेत. त्यांमध्ये श्रीकृष्णाने जन्मापासून मरणापर्यंत कसलेही अधर्माचरण केले नाही, अथवा कोणतेही दुष्कृत्य त्याच्या हातून घडले नाही, असे लिहिले आहे. परंतु या भागवतकाराने वाटेल ते अनुचित दोष कृष्णाच्या माथी मारले आहेत. दूध, दही, लोणी इत्यादींची चोरी, कुब्जादासीशी समागम, परस्त्रियांशी रासक्रीडा इत्यादी खोटेच दोष श्रीकृष्णावर लादले आहेत. ते सारे वाचून व इतरांना वाचून दाखवून, स्वतः ऐकून व इतरांना ऐकवून इतर पंथांच्या लोकांनी श्रीकृष्णाची बदनामी चालविली आहे. हे भागवत नसते, तर श्रीकृष्णांसारख्या महात्म्याची खोटी निंदा मुळीच झाली नसती. (सत्यार्थ प्रकाश-११ वा समुल्लास)

- एक चिन्तनात्मक लेख -

पितर श्राद्ध (महा-लय)

- पं.राजवीरजी शास्त्री(पुरोहित)

एकदा वृद्ध आई-वडीलं आपल्या शहरी राहणाऱ्या मुलाकडे चार दिवस राहण्यासाठी गावातून निघाले. जाताना त्यांनी त्यांच्याकडे अनेक वर्षापासून असलेला विश्वासू सेवक होता. त्याचेकडे घराची चावी दिली. सोबत एक लहान पत्र्याची पेटी ही दिली. म्हणाले घराची देखरेख तर करच पण या पेटीची ही विशेष काळजी घे. आणि ते मुलाकडे निघून गेले. सेवक हा मालकाचा आज्ञाधारकच होता. ती पेटी तो आपल्या मांडीवरच घेऊन बसला. झोपतांना उशाला घ्यायचा. बाहेर जायचे झाले की पेटीसुद्धा सोबतच घेऊन जायचा. असे करीत असतांना पेटीची हालचाल होताना खूप आवाज होत होता. हे नोकराला खटकू लागले, तेंव्हा त्याने ती पेटी उघडली. त्यात कांही वस्तू होत्या. त्यांचा आवाज होत होता, त्या वस्तू बाहेर फेकून दिल्या आणि पूर्ववत ती पेटी सांभाळू लागला. तर मग आता सांगा, त्याचे मालक व मालकीन जेंव्हा घरी परत येतील आणि हा सर्व प्रकार पाहतील, तेंव्हा त्या विश्वासू व इमानदार सेवकाला प्रसन्नतेने शाबासकी देतील? की त्याला अशा वागण्यावर मुर्खात काढतील?

बंधुनों! आत्मपरिक्षण करा. आपण त्या सेवकापेक्षा वेगळे आहोत का? ते शोधा. आपणही आपले पूर्वज, आपला धर्म, आपली संस्कृती, आपले सण-उत्सव, व्रत, चालीरिती परंपरा यांचे तंतोतंत जतन करीत आहोत. पण हे करतांना त्या प्रामाणिक, पण वेड्या सेवकाचे अनुकरण तर करीत नाही ना? यावर विचार करा.

पूर्वजांनी घालून दिलेल्या रुढी-परंपरा, सण-वार, उत्सव वगैरे विषयींचा आदर आपण केला पाहिजे. त्यांची श्रद्धा व निष्ठापूर्वक जपणूक ही केलीच पाहिजे. याबाबत दुमत नाही.

आपल्या पूर्वजांनी, ऋषी-मुनींनी साधु-संतांनी ज्याचे रक्षण-पालन पोषण करायला सांगितले आहे ते का व कशासाठी त्यांचा उद्देश्य काय? जे करायला सांगितले ते साध्य आहे की साधन आहे ? याचा विचार करण्याची आज गरज आहे. याचा सारासार विचार न करता सण साजरे करणे म्हणजे रिकामी पेटी सांभाळण्यासारखे आहे.

मानवमात्राला जीवनाची सार्थकता कशात आहे? हे सांगण्यासाठी तो हसत-खेळत सहजपणे अभ्युदय म्हणजे इहलोकी सुखी समाधानी व्हावा आणि निःश्रेयस अर्थात परलोक सिद्ध करण्यासाठी, म्हणजेच मोक्ष मिळविण्यासाठी समर्थ व सक्षम व्हावा यासाठी या धर्म-संस्कृती, उत्तम परंपरा, सण-वार-उत्सवरुपी उपयोगी साधनांना त्याने आपल्या हाती सोपविले आहे. पण आपण त्यांचा अभ्युदय व निःश्रेयस प्राप्तीच्या दृष्टीने उपयोग न करता त्या साधनांनाच साध्य मानून त्यांना चिकटून बसलो आहोत. हा विशुद्ध आंधळेपणा आहे. साधनांची काळजी घेणे, त्यांना सुव्यवस्थित ठेवणे ही चांगलीच गोष्ट आहे. पण जी साधने ज्या कामासाठी आहेत, त्या कामासाठी त्यांचा सदुपयोग करणे हे अधिक महत्त्वाचे आहे.

आता 'श्राद्ध' पक्ष साजरा करण्याची परंपरा आपण जपतो. मान्यता अशी आहे की भाद्रपद महिन्याच्या कृष्ण पक्षात पितर पृथ्वीवर येतात. त्यांच्या नावाने ब्राह्मणांना अन्न, वस्त्र, दान-दक्षिणा वगैरे देऊन श्राद्धतर्पण किंवा पिंडदान केल्याने त्यांच्या आत्म्याला शांती मिळते. ते प्रसन्न होऊन आशीर्वाद देतात. त्यामुळे परिवारामध्ये सुख-समृद्धी नांदते. यश-कीर्ती प्राप्त होते. पण जर काय त्यांचे श्राद्ध नाही केले, तर जन्म कुंडलीत पितृदोष येतो. घरात सुख शांती नांदत नाही. कुठल्याही कामाला यश येत नाही. मुलां-मुलींचे विवाह जुळत नाहीत. मुले दुराचारी, दुर्गुणी बनतात. म्हणून आपण श्राद्ध-तर्पण विधी केला जातो.

हे खरे आहे की पितरांच्या श्राद्ध तर्पणाने ते 'पितर' तृप्त होतात. त्यांनी 'तुझे कल्याण होवो' असे म्हटले की कल्याणच होते. शास्त्र सांगते की, थोरांची सेवा व अभिवादनाने दीर्घायुष्य, विद्या, यश व बल या चार बाबी प्राप्त होतात. घरातल्या कटकटी नाहीशा होतात. मुले सदाचारी सुस्वभावी बनतात, घरात स्वर्ग-सुख नांदते. आपण अनेक वर्षांपासून वार्षिक पितर श्राद्ध घालतो. पण शास्त्रात जे फळ सांगितले आहे, ते फळ पदरी पडताना दिसत नाही. कारण आपण ज्यांना 'पितर' म्हणतो, ते आपल्या पिंडदानाने तृप्त झाले की नाही? त्यांनीआशीर्वाद दिला की नाही? हे काहीच कळायला मार्ग नाही आणि तो कळणार ही नाही. कारण पितराच्या आत्म्याला शांती मिळावी, ते प्रसन्न व्हावेत, त्यांचा आशीर्वाद मिळावा म्हणून जो

श्राद्धतर्पणाचा विधी केला. तोच मुळात खोटा आहे. कारण शास्त्रामध्ये दिवंगतांना मृत पावलेल्यांना पितर म्हटले नाही, फार तर आपण त्यांना 'पूर्वज' म्हणू शकतो. त्यांच्यासाठी त्यांनी केलेल्या उपकाराची जाणीव ठेवलीत, तरीही पुरेसे आहे. त्यांना तुमच्या पिंडदानाची व श्राद्ध-तर्पणाची मुळीच गरज नाही. तर मृतांपेक्षा जीवंत असणाऱ्यांनाच अन्न, वस्त्र, निवारा, सेवा-सुश्रूषा, आदर, मान-सन्मानाची गरज असते.

जीवंत व्यक्तीच श्राद्ध-तर्पणाचा स्वीकार करु शकते. तीच प्रसन्न होऊन आशीर्वाद देऊ शकते. म्हटलेच आहे ना- 'जीवित बाप से दंगमदंगा, मरे हुए को पहुचाये गंगा!' अशा वर्तनाने कुंडलीतील पितर दोष नाहीसा होत नाही उलट तो अधिक मजबूत होऊन बसतो. जीवंत आई-वडील, सासू-सासरे, आजी-आजोबा व पणजी-पणजोबा यांना शास्त्राने पितर म्हटले आहे. जीवित आई-वडील, आजी-आजोबा व पणजी-पणजोबा अशा तीन पिढ्या एकाच परिवारात एकत्रितपणे पाहण्याचा योग फार थोड्या जणांना नशीबी येत असतो. प्राचीन काळी लोक शंभर ते दीडशे-दोनशे वर्षांपर्यंत जगायचे. तेंव्हा तीन पिढ्यांची सेवा सुश्रूषा करणे सहज शक्य होते. या तिन्ही पिढ्यांची सेवा सुश्रूषा मनोभावे करणे, त्यांची आज्ञा पाळणे, त्यांना सुयोग्य वागणूक देणे, आदर मान-सन्मान देणे. याशिवाय स्वतःही विद्वान, धर्मात्मा, सदाचारी, सुस्वभावी व सुकर्मी बनून राहणे, या व्यवहारांचेच नाव 'श्राद्ध' आणि 'तर्पण' आहे. इतरांना प्रसन्न करण्याची हीच खरी विधी आहे आणि असे 'श्राद्ध' रोज नित्य करावे लागते, याला शास्त्रीय भाषेत 'पितृ-यज्ञ' म्हणतात. हेच खरे 'पितृश्राद्ध' आहे. अशा पितृश्राद्ध व तर्पणातच खरी तृप्ती आहे, यात शांती व समाधान आहे.

जीवंत पितरांची हेळसांड करणे, त्यांची उपेक्षा करणे, त्यांना शिवीगाळ करणे किंवा त्रास देणे सोडायचे नाही आणि जे जिवंत नाहीत, त्या मृत पितरांच्या आत्म्याला शांती मिळावी, म्हणून कोणाचे तरी पोट भरण्यात काहीच अर्थ नाही. पितृयज्ञ किंवा पितर श्राद्ध हे नेहमीच करायचे असते. मग भाद्रपद महिन्यातील कृष्ण पक्षाला पितृपक्ष किंवा श्राद्धपक्ष का म्हणतात?

याचा संबंध चातुर्मासाशी येतो. प्राचीन काळी ऋषि-मुनी, साधु-संत, तपस्वी, वानप्रस्थी, संन्यासी व आचार्य